

That the Bill, as amended; be passed.

The question was put and the motion was adopted.

Uncorrected—Not for publication
—31-5-1995.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI SURESH PACHOURI): As per List of Business, at 6 o'clock, we have to take up the short Duration discussion. I would like to take the sense of the House. I would like to know whether we should take up the Short Duration discussion or the Maternity Benefit (Amendment) Bill.

SHRI VAYALAR RAVI: Sir, we can pass it without discussion. Sir, it is not a controversial Bill. It can be passed without discussion.

SHRI MD. SALIM: It cannot be passed without discussion.

SHRIMATI KAMLA SINHA: Sir, it can be taken up tomorrow.

DR. BIPLAB DASGUPTA: Sir, there are only two or three speakers. It will take only 20 or 25 minutes.

SHORT DURATION DISCUSSION on the situation arising out of increasing foreign debt of the country.

डा० मुरली मनोहर जोशी (उत्तर प्रदेश): उपसभाध्यक्ष महोदय, भारत पर बढ़ते हुए ऋण के भार के संबंध में मैं सदन का और इस सदन के द्वारा सरकार तथा देश का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। 8वीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में यह कहा गया था—श्री प्रणव मुखर्जी के द्वारा—

"While working out the financing pattern of the Eighth Plan, one of our major concerns was to avoid the trap that we had got into during the Seventh Plan. At the time of the formulation of the Seventh Plan, it was envisaged that nearly 40 per cent of

the total public sector outlay would be financed by the balance from the current revenue BCR and by the contributions from the public sector enterprises, both, inclusive of additional resource mobilisation. Ultimately, the contribution from the BCR and public sector enterprises turned out to be only 20 per cent of the total outlay and the balance was met through borrowings. That created an internal debt trap and acute BOP crisis. We wanted to avoid that situation and confine the public sector outlay to a reducible minimum level essential for ensuring the targetted growth."

इससे बड़ी चिंता होती थी कि सातवीं पंचवर्षीय योजना के बाद देश के ऊपर ऋण भार बढ़ा है और देश जो एक ऋण जाल में फँसता जा रहा है उससे बचने की चिंता आठवीं पंचवर्षीय योजना में की गयी। इस बारे में देश का और आयोजकों का ध्यान आकर्षित किया गया हमें बड़ा साहस हुआ जब श्री मनमोहन सिंह जी ने संसद को यह बताया कि भारत कहीं भी ऋण जाल के निकट नहीं है। इसका कोई खतरा नहीं है। अब सरकार के दो मंत्रियों के ये विवरण योजना और डेट ट्रेप के बारे में सदन और देश के सामने है। मैं समझता था शायद वित्त मंत्री महोदय ने इस बारे में गंभीरता से विचार किया होगा और देश को ऋण जाल से बचाने के लिए कुछ न कुछ योजनाएँ या कुछ न कुछ उपाय बरते होंगे। लेकिन मुझे बहुत खेद और दुख के साथ कहना पड़ता है कि पिछले 4-5 सालों में इस तरफ सरकार ने गंभीरता से ध्यान नहीं दिया।

विश्व में निर्धन देशों का ऋण बढ़ता जा रहा है। 1982 में 42 निर्धनतम देशों पर 106 यू.एस० बिलियन डालरस का कर्जा था जो 1992 में 360 यू.एस० बिलियन डालर हो गया, करीब साढ़े तीन गुना बढ़ गया। इसी दौरान भारत-वर्ष में सरकार ने जो अपने ऐतिहासिक मूल्य पर, बुक वैल्यूज पर जो कर्जा दिखाया है वह 1980-81 में 11,298 करोड़ रुपए और 1994-95 में 45,908

जो साढ़े चार गुना है। यानी विश्व के निर्धनतम देशों में जो साढ़े तीन गुना की बढ़ि हो गयी वह हिंदुस्तान में साढ़े चार गुना की बढ़ि हुई। इस तरह से सरकार ने अपने इकनामिक सर्वे के अंदर यह स्वीकार किया है कि भारत आज तीसरा सर्वाधिक ऋणी देश है। 1992 में भारत पांचवा सबसे अधिक ऋणी देश था। इसलिए इन तीन सालों में हमने बहुत प्रगति की और पांचवे नम्बर से बढ़कर तीसरे नम्बर पर आ गए।

मुझे सबसे अधिक आश्चर्य जो होता है वह यह कि भारत सरकार अपने कर्ज की ठीक ठीक हालत देश को नहीं बताती। अलग अलग आंकड़े देते हैं। अब आर्थिक सर्वेक्षण में, इकनामिक सर्वे के पृष्ठ 19 पर इन्होंने वे आंकड़े दिए हैं जो अभी मैंने पढ़कर सुनाए हैं—एक्सटर्नल डेट आउट-स्टैंडिंग 1980-81 में 11,298 करोड़ रुपए और 1994-95 में 49,508 करोड़ रुपए। लेकिन अगर आप इनके पृष्ठ 92 को देखें तो वहां ये ऋण की राशियां बदल गयी हैं। वहां 1994-95 में यह राशि 90.45 बिलियन डॉलर और 2,78,980 करोड़ रुपए भारतीय मुद्रा में हो गयी। 1994-95 में जिसके मैंने आंकड़े दिए वह 2,84,200 करोड़ रुपए हैं। इस प्रकार आप ये अलग अलग आंकड़े दे रहे हैं।

फिर एक और आंकड़ा मैंने देखा जो रिसीट बजट में है। इनके पेज 42 पर जो आंकड़े दिए गए हैं वे और भी मजेदार हैं। वे 1993-94 में 47,345 करोड़ रुपए कहते हैं और 1994-95 के लिए 60,628 करोड़ रुपए कहते हैं। ये ही वे आंकड़े हैं जिनको हमारे लेखा नियंत्रक ने उद्धृत किया है। तो ये तीन-तीन आंकड़े क्यों दिए जा रहे हैं? पहले भी सरकार अपने तमाम आंकड़ों के द्वारा देश को यह बताना चाहती है कि कर्जा बहुत बड़ा है। हमने दो साल पहले सरकार का ध्यान आकृष्ट किया था भारतीय जनता पार्टी की तरफ से कि ये आंकड़े आप हिस्टोरिकल बुक वॉल्यूम में क्यों दे रहे हैं? सही आंकड़े क्यों नहीं दे रहे हैं? अब एक जगह बहुत चुपके से यह पृष्ठ 92 पर आपने यह दिखा दिया कि आखिर में

कहीं छोटा सा लिख कर दिखा दिया, लेकिन मुख्य जो बजट की प्राप्ति बजट है वह रिसीट्स का जो बजट है वह और जो इकोनोमिक सर्वे की बड़ी टेबल हैं वे उसमें आप हिस्टोरिकल बुक वॉल्यूम से दिखा रहे हैं। सर, मैं देखता हूं कई बार कि आप जो अपनी स्थिति दिखाना चाहते हैं कर्ज को कम करने की उसका भी एक और मजेदार उदाहरण है। वह यह है कि आप देखें इसमें इकोनोमिक सर्वे के पृष्ठ 87 पर, वहां आपने अपने रिजर्व में दिखा रखी है कर्मशियल बारोइंगज। अब कर्मशियल बारोइंगज यह रिजर्व में कैसे हो सकती है या फॉरेन इंस्टीट्यूशनल इन्वेस्टमेंट यह रिजर्व में कैसे हो सकता है? नान-रेजिडेंट्स की डिपॉजिट्स उस पर भी कर्जा देना पड़ता है। यह रिजर्व में कैसे हो सकता है? फिर आप आगे चल करके अगर आप इसी की एस-112 को देखें तो उसके अंदर आपने यही सब राशियां अपने एक्सटर्नल डेट में दिखा रखी हैं। यहां एन.आर.आई. डिपॉजिट्स यह सब जितने भी हैं यह आप उसमें दिखाते हैं कर्ज में तो एक जगह आप उसी राशि को प्राप्तियों में दिखाते हैं रिजर्व में दिखाते हैं, उस पर आप कर्जा देते हैं, उस पर आप ब्याज देते हैं और उसी राशि को फिर आप आगे चल करके अपने यहां यह बारोइंगज में दिखाते हुए कर्ज में दिखाते हैं। तो यह हिसाब की आप इस तरह की जगलरी क्यों करते हैं? यह एक मैं समझ नहीं पाया, आप अर्थशास्त्री हैं, मैं तो अर्थशास्त्री नहीं हूं। मैं तो विज्ञान का विद्यार्थी हूं। लेकिन यह अर्थशास्त्र में अक्सर हम भ्रमक किया करते थे पहले कि दुनिया में कई किस्म की झूठ होती है। एक झूठ, एक सफेद झूठ और उसके बाद एक आकड़े।

Life, damn lie and statistics

तो यह कई बार ऐसा लगता है कि आप यह क्यों आंकड़ों में इस तरह की बातें करते हैं? सीधे-सीधे बताइये कि देश के ऊपर कितना विदेशी कर्जा है, कितना

The Vice-Chairman (Kumari Saroj Khaparde) in the Chir

घरेलू कर्जा है, कितनी आपके पास देनदारियां हैं, कुल मिला करके कितना ब्याज आप दे रहे हैं, देश की वास्तविक स्थिति

क्या है ? मैं आपसे चाहूंगा कि क्या सरकार इस पर कोई व्हाइट पेपर इश्यू करेगी कि इस देश के ऊपर कितना कर्जा है, कितने आपके पास रिजर्व और किस तरह से आप यह सारी व्यवस्था का प्रबंध कर रहे हैं ? मैं चाहूंगा कि आप इसके बारे में फारेन रिजर्व की स्थिति के बारे में और इस देश की कर्ज की सही स्थिति के बारे में एक व्हाइट पेपर इश्यू करें। अब मैं आपके सामने यह देख रहा हूँ, तब देखता हूँ बराबर कि हमारा घरेलू कर्जा 1990-91 में एक लाख 54 हजार 3 करोड़ था।

THE FINANCE MINISTER (SHRI MANMOHAN SINGH): Madam, this is a discussion on external debt.

डा० मुरली मनोहर जोशी : जी हाँ, मैं बता रहा हूँ वह एक्सटर्नल डेट और इंटर्नल डेट मिले हुए हैं। जब इन्टर्नल डेट बढ़ता है तब आपके ब्याज की दर बढ़ती है, तब आपके ब्याज की देनदारियाँ बढ़ती हैं आपके पास बजटरी डिफाजिट होता है उसको पूरा करने के लिए आप बारोइंग्स ले करते हैं और वे फॉरेन बारोइंग्स होती हैं। इसलिए यह ऐसा नहीं है कोई आंतरिक कर्जा या विदेशी कर्ज से जुड़ा हुआ नहीं है। कर्जा तो पूरा का पूरा जुड़ा हुआ है। तो यह बढ़ करके 3 लाख 76 हजार 369 करोड़ हो गया। दुगुना हो गया। एक्सटर्नल डेट 1990-91 में एक लाख 63 हजार 310 करोड़ था और सिर्फ डोवैलेशन की वजह से जो मेजर कंट्रीब्यूशन हुआ 1991-92 में 2 लाख 53 हजार 30 करोड़ रुपया हो गया और आज करीब-करीब 2 लाख 85 हजार करोड़ रुपया लगभग-लगभग आप खुद स्वीकार करते हैं, तो इस तरह से 1990-91 से मायने जब से आप आए उसके जो पहले की स्थिति थी उसमें अन्दरूनी कर्जा दुगुना हो गया और इंटर्नल देनदारियाँ जिसमें बारोइंग्स के अलावा जो और भी प्रोविडेंट फंड और ये तमाम डिफाजिट्स हैं वे मिलाकर देखा जाए तो 1990-92 की तुलना में आज 80 परसेंट बढ़ गया और एक्सटर्नल डेट यह भी 1990-91 का 75 परसेंट बढ़ गया। अब मैं यह देखता हूँ कि इस तरह से आपके जो ब्याज की देनदारियाँ

हैं वे भी बहुत भारी मात्रा में बढ़ रही हैं। अब आप इस समय 52 हजार करोड़ रुपया ब्याज 1995-96 में दे रहे हैं और यह कुल बारोइंग्स का 99.3 परसेंट है। अगर थोड़ी सी और देनदारी बढ़ जाएगी तो कुल बारोइंग्स आपको ब्याज में चुकानी पड़ेगी, तो यह डेट ट्रैप नहीं है तो और क्या है ? पिछले साल यह 79.9 परसेंट था। उसके पहले 74.2 परसेंट था 1992-93 में बारोइंग्स का प्रतिशत इन्टरेस्ट 111.4 था, तो यह लगभग-लगभग वही घूम रहा है। तो इसमें खतरा यह है कि अगर थोड़ी सी भी हमारी देनदारी बढ़े और थोड़ा सा भी ब्याज बढ़ा तो फिर आपके पास सिवाय इसके कि उस देनदारो को चुकाने के लिए और अधिक कर्जा, और उस कर्ज को चुकाने के लिए और अधिक कर्जा और यहाँ डेट ट्रैप होता है और इसके अलावा और डेट ट्रैप क्या कहा जाय ? रेवेन्यू डेफिसिट आप का बढ़ रहा है। आपने कोशिश की है कि बजटरी डेफिसिट कम किया जाय, लेकिन अगर रेवेन्यू डेफिसिट बढ़ता चला गया तो उस से भी देश के डेवलपमेंट के लिए आप के पास पैसा नहीं रहेगा और स्थिति यह होगी कि डेवलपमेंट के लिए आप को फिर बारोइंग्स करनी पड़ेगी। फिर अगर आप बार-बार बारोइंग्स करेंगे तो आज जो कर्ज की हालत है, उस कर्ज में और इजाफा होगा। आज भी मेरा ख्याल है कि 8 हजार मिलियन का रिपेमेंट है विदेशी कर्ज का और ट्रेड बैलेंस भी करीब-करीब इतना ही है। तो मैं जानना चाहता हूँ कि अगर बैलेंस आफ ट्रेड इसी तरह से बढ़ता चला गया और हमारे इम्पोर्ट-एक्सपोर्ट का गैप भी बढ़ता चला गया तो इस कर्ज के अंदर और वृद्धि होगी क्योंकि मैं देख रहा हूँ कि आप ने आठवीं प्लान में यह कहा गया था कि आप 13.6 परसेंट एक्सपोर्ट ग्रोथ करेंगे और 8.4 परसेंट इम्पोर्ट ग्रोथ का रेट रहेगा, लेकिन मैं आपके इकॉनॉमिक सर्वे में देखता हूँ तो यह कहा गया है कि रेट ऑफ चेंज एक्सपोर्ट में 16.9 है जो कि 13.6 था और रेट ऑफ इम्पोर्ट जो कि 8 परसेंट होना चाहिए था, वह 24 परसेंट है। यह स्थिति अगर देश में रही

तो इसका अर्थ है कि ऐम्पोर्ट और इम्पोर्ट के बीच में गैप बढ़ता चला जाएगा और आप को वेलेंस ऑफ मेमेंट की प्रॉब्लम हमेशा रहेगी और अगर आप के पास यह पैसा नहीं है तो आप उसे कहाँ से लाएंगे ? आप के पास बॉरोइंग्स के अलावा और क्या रास्ता है ? फिर अगर बॉरोइंग्स की स्थिति इसी तरह से रही तो सिवाय इस के कि आप ऋण जाल में फँस जाएँ और कोई रास्ता दिखायी नहीं पड़ता है ।

महोदया, मुझे एक और खतरा दिखाया दे रहा है जोकि काफी चिंता का विषय है । आप यह देख रहे हैं कि रुपए का अवमूल्यन बराबर हो रहा है । पिछले 4-5 महीनों में रुपए का काफी अवमूल्यन हुआ है और अगर मैं ठोक से कह सकता हूँ तो पहले 31.37 रुपए का एक डॉलर था जोकि कुछ महीने बाद 31.68 हुआ है और अभी अप्रैल महीने में यह 31.93 तक चला गया । इस तरह आप के रुपए का अवमूल्यन हो रहा है । अब आप के पास फॉरेन एक्सचेंज बढ़ रहा है और अगर आप कहते हैं कि आप की इकॉनोमी स्ट्रांग हो रही है तो आप की करेंसी वीक क्यों हो रही है ? अगर इकॉनोमी स्ट्रांग हो रही है तो करेंसी स्ट्रांग होना चाहिए, लेकिन आप की करेंसी दिनों दिन वीक हो रही है और आपको इंटरवेंशन प्राइस 31.93 प्रति डॉलर के हिसाब से कर रहे हैं तो इस से भी देश के अंदर इनफ्लेशन बढ़ रहा है । इस इनफ्लेशन का मुकाबला आप कैसे करेंगे ? आज यह इनफ्लेशन फिर से 11-12 परसेंट की रफ्तार पर पहुँच रहा है । हालांकि आप कौशिश करते हैं उस को छिपाने की और कभी-कभी थोक मूल्यों के आधार पर इनफ्लेशन को गणना करते हैं मगर थोक और खुदरा के बीच में भी बहुत बड़ी खाई है । महोदया, मैं तो बाजार जाता नहीं हूँ, लेकिन मेरी पत्नी कभी-कभी बाजार जाती है, तो वह कहती है कि अखबार में वित्त मंत्री जी का ब्यान निकला है कि देखो मुद्रा विस्तार में और महंगाई पर नियंत्रण हो गया है और कहती है कि सामान सस्ता मिलना चाहिए, लेकिन उन को दुकानदार कहता है कि तो फिर मनमोहन सिंह जी से सामान खरीदिए,

मेरी दुकान पर तो इसी कीमत पर मिलेगा । तो दाम बढ़ रहे हैं और यह मुद्रा विस्तार के खतरे आप मुझ से बेहतर जानते हैं कि उसके कारण आर्थिक और आर्थिक प्रगति में कितनी बाधाएं आएंगी ? आप के प्रोजेक्ट कॉस्ट किस तरह बढ़ेंगे और आप ने प्लान के बारे में जो कुछ सोचा था, देश की प्रगति के बारे में जो कुछ सोचा था, वह आप पूरा नहीं कर सकेंगे । महोदय, वैसे भी 8वीं पंचवर्षीय योजना का कोई भी टार्गेट पूरा नहीं हुआ है, न वह कृषि के क्षेत्र में हुआ है, न उद्योगों के क्षेत्र में और न एम्प्लायमेंट के क्षेत्र में हुआ है । इसका अर्थ यही है कि आप बराबर उस में पैसा घटाते जा रहे हैं । तो सिर्फ आंकड़े दिखाने से कि इस साल पिछले साल की तुलना में हम ने विदेशों से कर्जा कम लिया है या उस के अंदर थोड़ी सी गिरावट आ गयी है, यह कहकर आप हमारा समाधान नहीं कर सकते हैं कि इस देश पर कर्ज का बोझ नहीं बढ़ रहा है और इस देश पर कर्ज के कारण, डैट ट्रेप की वजह से कोई दिक्कत नहीं हो रही है ।

महोदय, यह जो आप का मुद्रा भंडार है, इस के अंदर भी मुझे कभी-कभी दिखायी देता है कि मैक्सिको की बीमारी के जरासीन या वायरस मौजूद हैं । आप के पास देश के अंदर एन०आर०आई० डिपॉजिट्स हैं, आप के पास पोर्टफोलियो इन्वेस्टमेंट है और ये तमाम पैसे ऐसे हैं कि जब तक उन को मुनाफा मिलेगा तब तक यहाँ रहेंगे और जिस दिन मुनाफा नहीं मिलेगा उस दिन यहाँ से भाग जाएंगे । मैक्सिको में यही हुआ था । पहले वहाँ मुद्रा का विस्तार हुआ तो ब्याज की दर बढ़ी । ब्याज की दर बढ़ी तो फॉरेन इन्वेस्टमेंट हो गया, आने लग पैसा और जैसे ही वहाँ उनकी करेंसी का अवमूल्यन शुरू हुआ, वैसे ही वहाँ से निवेश भागना शुरू हो गया । उसके बाद मैक्सिको की ब्याज हलत हुई, क्या तयाही हुई, यह सारी दुनियाँ जानती है । करीब-करीब उसी प्रकार के कीटाणु आज हमारे देश की अव्यवस्था में प्रवेश कर रहे हैं । यह वायरस यहाँ मौजूद है । मैं देखता हूँ कि सरकार ने इसको रोकने के लिए कोई

प्रयत्न नहीं किया है बल्कि कभी कभी लगता यह है कि अगर रुपए की विश्वस्-नीयता घट गई बिल्कुल और रुपए की दर बिल्कुल घटती चली गई इस तरह से, तो हम भारी मुसीबत में पड़ जाएंगे।

महोदया, पिछले दिनों मैंने इकोनोमिक्स अखबार में देखा था, इसका इकोनोमिक्स इटेलीजेंट यूनिट है उसने उसमें यह रिपोर्ट दी है भारत की अर्थव्यवस्था के बारे में सन् 1995 और 2000 के बीच का बताता है कि—

“Nothing big is going to happen in India and the growth will remain almost the same, but one thing will happen that 42 rupees to a dollar in 2000.”

अब यह स्थिति है, तो सन् 2000 में रुपए और डालर के बीच में रिश्ता यह होगा कि 42/- रुपए का एक डालर हो जाएगा। इससे तो हमारा कर्जा घर बैठे ही बढ़ जाएगा। फिर कोई ज्यादा बाहर से कर्जा लेने की जरूरत नहीं है, अंदर से ही कर्जा बढ़ जाएगा, इमीडिएटली कर्जा बढ़ जाएगा। तो यह खतरे पैदा हो रहे हैं। जिस रफ्तार से रुपए का अवमूल्यन हो रहा है, मुझे इसमें कोई शक नहीं कि 2000 में, शायद 1999 में भी हो सकता है या 2001 में भी हो सकता है, लेकिन इस तरफ आप बढ़ते चले जा रहे हैं और हिन्दुस्तान को आप एक ऋण-जाल की तरफ धकेलते चले जा रहे हैं।

मैंडम, आप यह देखेंगे कि हमारे वर्ष 1994-95 के जो इंटररेस्ट चार्जेंज हैं वह सेंट्रल बजट का 28 परसेंट है और डेट सर्विस रेशो भी हमारा 27 परसेंट और इसी के आसपास है। यह साथ साथलिक हैं। इस मामले को भी गौर से देखेंगे कि इंटरनल इंटररेस्ट रेट में और एक्सटर्नल इंटररेस्ट रेट में जो संबंध हैं, वॉरोइंग और बजट के बीच में जो संबंध हैं, इंटररेस्ट और बजट के बीच में जो संबंध हैं और एक्सटर्नल रेट का जो संबंध है, वह लिक्विड है आपस में। उसको आप अलग नहीं कर सकते। इसलिए अगर आप यह कहेंगे कि यह सवाल सिर्फ विदेशी ऋण के बारे में उठा था, लेकिन मैं कहूंगा कि

विदेशी ऋण और घरेलू ऋण एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। इनको आप अलग नहीं कर सकते। कर्जा तो कर्जा ही है और इसलिए मुझे चिंता है कि आगे आने वाले समय में जो देश की स्थिति है वह काफी खतरनाक होने वाली है। वर्ल्ड बैंक ने यह कहा है कि दिवालिएपन का फैसला दो कसौटियों से हो सकता है। एक कसौटी तो यह है कि जिस देश का बकाया कर्जा उसके निर्यात का 200 प्रतिशत हो तो वह मुसीबत में है। हिन्दुस्तान में निर्यात 26 बिलियन डालर है और कर्जा 90 बिलियन डालर है, तो यह तो 300 प्रतिशत हुआ। इस तरह से वर्ल्ड बैंक, जिसके आप ताबेदार हैं, जिसके तुल्य शब्दों को आप मानते हैं, जिसकी नीतियों को मानते हैं, जिसके आदेशों पर आप चलते हैं, उसकी यह कसौटी है और नतीजा यह है कि आप मुसीबत में हैं। दूसरी कसौटी जो उन्होंने की है, उससे आप बचे हुए हैं। वह कहते हैं कि जो देश अपने वार्षिक निर्यात का 40 प्रतिशत डेट सर्विसिंग पर खर्च करता है, वह बिल्कुल दिवालिएपन की तरफ बढ़ता है, इनसोल्वेन्सी की तरफ बढ़ता जाता है। अभी हम 35 परसेंट के आसपास हैं, लेकिन अगर हमारा निर्यात घट जाए या किसी वजह से आपको कर्जा और जरा सा लेना पड़ जाए, आप देखिए कि माजिन इतना धोड़ा है कि एक थोड़ी सी हेरफेर से यह 35 परसेंट से 40 परसेंट की तरफ बढ़ जाएंगे। इस तरह आप देश को दिवालिएपन की तरफ ले जा रहे हैं। मैं तो यह कहूंगा कि पिछले चार-पांच सालों में इस सरकार की आर्थिक नीतियों ने इस देश को दिवालिएपन की तरफ बिल्कुल जोर के साथ धकेला है। आप शायद यह समझते हैं कि आप इस ओर देश को धकेल कर चले जाएं, जिसको निकालना होगा वह कोई और सरकार होगी। कोई और आया, जो देश को निकालेगा। आपकी नीति, मुझे लगता है, यह है कि जब तक जियो, सुख से जियो, कर्जा लेकर घी पियो।

यावते जीवते सुखम् जीवते, ऋणम् कृत्वा घृतम् पीवते।

अस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमनम् कृताः

एक बार चिंता पर चढ़ गए तो फिर किसका कर्जा देना है और किससे लेना है। आपकी पार्टी तो चढ़ रही है, चली जाएगी और... (व्यवधान)...

श्री एस० एस० अहलुवालिया : (बिहार)
आप क्यों परेशान हो रहे हैं ?

डा० मुरली मनोहर जोशी : और उसके बाद सारे देश का भविष्य आप किस तरह से गिरवी रखते चले जा रहे हैं, देश को कर्जों की तरफ धकलते चले जा रहे हैं। मुझे आपसे एक निवेदन करना है और वह कि आपका एक भावण, मैं अक्सर उसको बहुत संभालकर रखता हूँ, जो आपने वर्ल्ड बैंक एनुअल कॉन्फ्रेंस आफ डवलपमेंट इकोनॉमिक्स 1989 में दिया था, उस मनमोहन सिंह जी और आज के मनमोहन सिंह जी का फर्क देखकर मुझे लगता है कि डालर में कितनी ताकत रही है और वह किस तरह से लोगों का दिमाग बदल देता है। आपने इसके चैप्टर 19 में "डवलपमेंट असिस्टेंस एंड कोडेशनलटी" के पैरा में कहा था। मैं इसको पूरा नहीं पढ़ रहा हूँ, इसकी दो-चार लाइनें ही पढ़ता हूँ :

"The international credit mechanism is in the final analysis a highly political mechanism. Creditors—particularly those who act as lenders of last resort—are in a strong bargaining position and are often able to impose their views on borrowers. Only an impartial international evaluation of development performance can inspire the confidence and respect of both donors and recipients"

आपने वह तो बनवाया नहीं, आप तो गैट में शामिल हो गए। आपने ऐसी व्यवस्था बनवा दी कि जिसके अंदर हम लोग तबहीं के रास्ते पर—तथा गर्दन बिल्कुल ऐसी घोटी जा रही है कि पता नहीं, कब दम निकल जाए। वह मनमोहन सिंह जी कहाँ गए जो एक ऐसी इंपार्शल इंटरनेशनल एजेंसी के पैरोकार थे, वह आज आप्रेसिव गैट जैसी इंटरनेशनल एजेंसी के पैरोकार कैसे हो गए ? मुझे

बहुत खुशी भी हुई थी जब आपने इसके अंदर कुछ टेक्नॉलॉजी और पेटेंट के संबंध में भी अपने विचार रखे थे। वह बहुत महत्वपूर्ण हैं और उससे भी जाहिर होता है कि जो कुछ किया जा रहा है... (व्यवधान) आपने इसके पेज-15 पर कहा था :

"With a few exceptions, the technological distance between the developing and the developed countries is widening. Neoclassical international trade theory, by postulating identical production function for different products in various countries, assumes this problem away. That this assumption is unrealistic becomes obvious when we consider that technical knowledge is often private property, that new advances in science and technology are increasingly being privatised, and that developed countries are now making attempts to coerce developing countries into conforming their domestic legislation on the protection of intellectual property to the interest of technology exporters."

DR. BIPLAB DASGUPTA: (West Bengal) These are the views of a professor.

डा० मुरली मनोहर जोशी : यह आपका बयान है। तब आप मंत्री नहीं थे लेकिन तब भी आप भारत का प्रतिनिधित्व तो कर रहे थे।

यह परिवर्तन कैसे हो गया ? जो बात आपने कही थी मैं उससे सहमत हूँ। यह आज हो रहा है और इससे हमारा तमाम बेजेंस आफ ट्रेड बिगडेगा। हम एक्सपोर्ट करने की हालत में नहीं रहेंगे। हमारे देश के अंदर मल्टीनेशनल, जिस तरह से आज नए पेटेंट कानून को जिसको आप लादने की कोशिश कर रहे हैं उसके बाद हमारी तमाम साइंस एंड टेक्नोलॉजी के ऊपर भारी आघात आ जाएगा। अगर आपको दुनियाँ के साथ कम्पटीट करना है जैसा कि दुनियाँ के साथ आप जुड़ रहे हैं,

तो फिर उसके अंदर बिना टैकनॉलॉजीकल एनोवेशन के आप कुछ नहीं कर सकेंगे और वह आप इस नए पेटेंट कानून के साथ उसको संसाधित कर रहे हैं। इसलिए आप भारत को आत्मनिर्भर बनाने के लिए और भारत की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ बनाने के लिए क्या कर रहे हैं? आप जो कुछ कदम उठा रहे हैं उससे भारत कर्ज के मामले में निकल नहीं सकेगा। आपने डॉलर के साथ रुपए को जोड़ दिया। डॉलर और येन के बीच में क्या हालत है? एक जमाना था जब 350 येन का एक डॉलर हुआ करता था। अभी 75 तक चला गया है और जहां तक मुझे याद है, 75 येन एक डॉलर के होने के बाद जापान अमेरिका से आर्थिक शक्ति के रूप में आगे बढ़ जाएगा। अब जापान ने विदेशी कर्ज इस तरह से नहीं लिए जैसे आपने लिए हैं। जापान ने अपने बाजार भी दुनिया के लिए इस तरह से नहीं खोले जैसे आपने खोले हैं। जापान के लिए जो आज भी उसके बाजार को पेनिट्रेट करना मुश्किल है। जापान ने अपनी संस्कृति के हिसाब से एक स्वदेशी मॉडल आर्थिक विकास का बनाया। आज 40-50 साल में उसने अमेरिका को टक्कर दे दी। आज अमेरिका परेशान है उसके सामने। लेकिन हमने भी उसी के साथ अपना निर्माण किया था, उसी के आसपास का समर्थन है। लेकिन हम इतने पीछे चले गए हैं। हम आज ऋण जाल में फंसे चले जा रहे हैं। इसलिए मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आप अपनी अर्थव्यवस्था को, अपनी आर्थिक नीतियों को सुधारें, उसके अंदर बदलाव करें और अगर यह मुद्रा विस्तार की दर इसी तरह से बढ़ती गई, कर्ज का गैप इसी तरह से बढ़ता गया, पेट्रो केमिकल प्रोडक्ट्स का अयात आप इसी तरह से करते रहे, तो फिर इस देश का भविष्य तो बहुत खतरे में है। आप जो बिजली की योजनाएं बना रहे हैं, उसके लिए भी आप विदेश से ईंधन इंपोर्ट कर रहे हैं। यह सब इंपोर्ट हमारे लिए महंगे साबित होते हैं। यह सब हमारे बैलेंस ऑफ पेमेंट को बिगाड़ता है। इसलिए हमारे कर्ज की रफ्तार को आगे बढ़ाता है। अगर कर्जा इस तरह से बढ़ता गया और

हम अपने बैलेंस ऑफ ट्रेड में यह घाटा पूरा नहीं कर सके तो फिर हमारे लिए सिवाए इसके कि हम दुनिया के सामने अपने आपको इंसोल्वेंट डिक्लेयर करें और कोई रास्ता नहीं बचेगा। मैं समझता हूँ कि अगर भारत सरकार कोई कंपनी होती तो अभी तक इंस्टालमेंट डिक्लेयर कर दी गई होती। आप सरकार हैं इसलिए बचे हुए हैं लेकिन आप इस देश को इंस्टालमेंट न बनाएं। हां, सरकार इंस्टालमेंट हो जाए उसमें मुझे कोई ऐतराज नहीं है लेकिन भगवान के वास्ते इस देश को इंस्टालमेंट न बनाएं। आपको आर्थिक नीतियों ने इस देश का सारा आत्मविश्वास नष्ट कर दिया है। हम को मजबूर कर दिया है कि हम दुनिया के सामने भिखमंगे के तौर पर अपनी पहचान बनाने लग जाएं। मुझे बहुत खतरा है, बहुत संदेह है कि आप इस ऋण जाल से इस देश को उबार सकेंगे। मैं समझता हूँ कि आपकी आर्थिक नीतियां इस मामले में पूरे तौर पर विफल हुई हैं। मैं यह जानना चाहूंगा कि आप इस संबंध में देश को कैसे आश्वस्त कर सकते हैं। मैं सदन से भी और सरकार से भी पूरी जितनी मेरे अंदर जो भी कुछ चिंता देश के प्रति, देश के भविष्य के प्रति है, उसको व्यक्त करना चाहता हूँ और आपसे यह अनुरोध करना चाहता हूँ कि इस देश को ऋण जाल से मुक्त कराइए, ऋण जाल में और धकेलिए मत। इस देश के पास बहुत साधन है, इस देश के पास किसी चीज की कमी नहीं है, प्राकृतिक साधन भरपूर है, बाँयो डाइवर्सिटी भरपूर है, ह्यूमन टेलेंट, ह्यूमन रिसोर्सेज दुनिया में सबसे अच्छे हैं। जापान के पास तो कुछ भी नहीं है। जापान के पास न कृषि की भूमि है, न जापान के पास रॉ मैटीरियल्स हैं, न मिनरल्स हैं, जापान के पास कोई भी ऐसी चीज नहीं है लेकिन फिर भी आज जापान आगे गया हुआ है। हमारे पास तो सब कुछ है लेकिन शायद नीति नियंत्रण जहां से होता है, नीतियों का संचालन जहां से होता है वहां से इस देश में आज उलटी नीतियां चल रही हैं। यह देश तो सोने के सिंहासन पर बैठा हुआ है लेकिन इसके नेता भिखारी बने हुए हैं। भारत तो एक सोने के सिंहासन

पर बैठा हुआ है लेकिन इसके नेताओं ने इसको भिखारी का दर्जा दे रखा है। मैं आपसे अपील करना चाहूंगा देश के वास्ते, देश के भविष्य के वास्ते आर्थिक नीतियों को सुधारिए, विदेशी ऋण से इस देश को मुक्त कीजिए, अर्थव्यवस्था को ठीक कीजिए। रीस्ट्रक्चरिंग का जिस रूप में आपने आज निर्णय लिया है उस रीस्ट्रक्चरिंग की प्रायोरिटीज को ठीक कीजिए। ग्लोबलाइजेशन को जिस रूप में आप ले रहे हैं, उस ग्लोबलाइजेशन से देश की अर्थ-व्यवस्था पर बहुत ऋण-भार पड़ा है, उसे ठीक कीजिए और सबसे बड़ी बात यह है कि देश को अपने पांवों पर खड़ा होने के लिए एक नेशनल प्राइड की जरूरत है, उसको पैदा कीजिए। नेशनल कॅनेबिलिटीज जो इस देश के अंदर है, उन्हें जागृत कीजिए और मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि अगर कोई भी सरकार इस देश में हिंदुस्तान के लोगों का आत्मविश्वास जगाने की कोशिश करेगी तो सारा देश उसकी मदद करेगा। मुझे यह भी याद है कि एक समय जब हमारी पाकिस्तान से लड़ाई हो रही थी, अमरीका ने हमारे अनाज की कमी का नाजायज फायदा उठा कर हमारे ऊपर स्पेयर्स और तमाम चीजें देने के बारे में प्रतिबंध लगाया था। उस समय भारत के प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री थे और उन्होंने कहा था कि हम विदेशी अनाज नहीं खाएंगे। सारे देश को उन्होंने आह्वान किया, हिंदुस्तान के लोगों ने हफ्ते में एक बार शाभ को भोजन भी बंद किया और हिंदुस्तान के किसानों ने उस आवाज को सुनकर कि देश को अनाज के मामले में आत्मनिर्भर बनाना है, चंद सालों में देश में अनाज की समस्या को दूर किया। मैं यह समझता हूँ कि अगर आप हिम्मत के साथ सामने आएँ, देश के लोगों से अपील करें व अपनी नीतियों को सुधारें और सरकार की नीयत को भी बदलें और देश का आह्वान करें तो देश आगे आ सकता है। इससे पहले कि आप देश को ऋण जाल में इस तरह फँसा दें कि उसके गले में एक ऐसा पत्थर बंध जाए कि उसका तैरना मुश्किल हो जाए, मैं चाहूंगा कि या तो आप अपनी नीतियों में बदलाव करें

बरना फिर देश मजबूर होकर आपका बदल देगा। धन्यवाद।

श्री एस. एस. अहलवालिया : उप-सभाध्यक्ष महोदय हमारे पूर्व वक्ता ने ऋण जाल के साथ-साथ जापान का मायाजाल भी फैलाया, सुनकर अच्छा लग रहा था। सौभाग्य ऐसा भारत का भी होता पर मैं अपने पूर्व वक्ता को इसके साथ-साथ बताना चाहूंगा कि जापान में स्वदेशी आंदोलन चलाने वाले की हत्या नहीं होती उसकी हत्या भारत में होती है। महात्मा गांधी की, स्वदेशी आंदोलन चलाने वाले की हत्या भारत में हुई थी, जापान में नहीं। . . . (व्यवधान) . . . सुन लीजिए, आरने अपनी बात कही, मैंने चुपचाप सुनी है। अब जगमग सुन लीजिए . . . (व्यवधान) . . . क्यों तिलमिला रहे हैं? विषय पर वोलूंगा मैं पर जब आप तुजना कर रहे हैं जापान से भारत की, आपको थोड़ा सोचना चाहिए कि भारत को आप नीचा दिखा रहे हैं। जापान के स्वदेशी आन्दोलन चलाने वाले की अगर 1948 में हत्या हो गयी होती तो जापान भी आज वैसा ही होता जैसा भारत है।

श्री ओ० पी० कोहरी : (दिल्ली)
आपने तो व्यक्ति के विचारों को हत्या कर दी।

उप-सभाध्यक्ष (कुमारी तरोज खापड़) : टोका-टाकी मत करिए। क्योंकि जब जोशी जी बोल रहे थे तो इधर के किसी भी सदस्य ने कुछ आवाज नहीं उठायी। आप लोग भी नहीं जोजेंगे। देखिए वह अपने विषय पर आ रहे हैं, इसके लिए थोड़ी पेशेंस रखिएगा।

श्री एस० एस० अहलवालिया : भारत को राष्ट्रीयता पर प्रश्न विन्हु लगाने के पहले जापान के इतिहास को पढ़ने के साथ-साथ यह भी पढ़ना चाहिए था कि जापान में भाषा के नाम पर आन्दोलन नहीं हुआ, जाति के नाम पर संघर्ष नहीं हुए, धर्म के नाम पर झगड़े नहीं हुए। अगर वहाँ धर्म के नाम पर, जाति

के नाम पर और भाषा के नाम पर बंगे हुए होते तो जापान की भी यही हालत होती जो भारत की है। पर आश्चर्य तो इस बात का है कि आर्य-भट्ट और जगदीश चन्द्र बसू का देश, जिसने सारे विश्व को, जिस आर्यभट्ट ने सारे विश्व को बताया कि एकलैस आफ अर्थ क्या है, थर्डिन्य फार्मूला आफ ऐल-जेन्ना बताया, जीरो का कांसेप्ट बताया, आज उस देश के लोग अमरीका के पेटेंट बिल से घबरा रहे हैं। जिस जगदीश चन्द्र बसू ने जीव विज्ञान के बारे में बताया, उस देश के लोग आज ब्रायो टेक्नालाजी से घबरा रहे हैं, जिसकी शुरुआत जगदीश चन्द्र बसू ने की थी। हमें तो गौरव होना चाहिए कि हमने लेकर उन्होंने किया आप सारी दुनिया से रायल्टी की मांग करिए। आज यह मांग भारत की भूमि से उठनी चाहिए कि जीरो का शब्द जो-जो दुनिया में यूज करता है, जीरो का कांसेप्ट जो यूज करते हैं, जो थर्डिन्य फार्मूला ऐलजेन्ना का यूज करते हैं, जो एकलैस आफ अर्थ की बात करते हैं, न्यूटन की ध्योरी 17वीं शदी में आयी पर सिक्स्थ सैचुरी में आर्यभट्ट आया। यह तो मैं इसलिए कह रहा था कि जोशी साहब ने जापान की बात कही थी। चार वर्ष पहले वित्त मंत्री जी ने जिन हालातों में हमारी स्थिति को संभाला था, वह हमारे सामने था। हमारे घर का सोना गिरवा रखा हुआ था। ऐसी हालत में कैसी व्यवस्था लेकर वह सोना वापिस आया है, इसे हरेक भारतीयवामो अच्छी तरह जानता है। कैसे आर्थिक अवस्था सुधारी गयी थी। आर्थिक अवस्था सुधारने के लिए ऋण जाल के बारे में जो बातें बार-बार उठाये जा रही हैं। यह ऋण जाल एक दिन का नहीं है। जब से भारत आजाद हुआ है, तब से विदेशी ऋण पर हमारा इन्फ्रास्ट्रक्चर क्रिएट करने के लिए बर्ज लेते गये। चाहे वह भाखड़ा नंगल हो, चाहे हमारी सड़कें हों, चाहे जल योजना हो, चाहे वह हमारा पावर सैक्टर हो, चाहे हमारा ग्नील का प्लांट हो, हम बर्ज लेते रहे हैं और एक पर एक सामने आते गये हैं। पर हमारी पब्लिक सैक्टर की इंडस्ट्रीज किस तरह से लॉस में रन कर रही हैं या उसकी आउटपुट

क्या है, उसकी एफीशेंसी क्या है, उसका रिटर्न क्या है, उन सारी चीजों को मद्दे-नजर रखा जाए तो हमारा ऋण जाल बढ़ता गया है। महोदया, मेरी आपकी माध्यम से वित्त मंत्री को गुजारिश है कि विदेशी ऋण की जगह अगर फारेन इन्वेस्टमेंट की मात्रा को बढ़ाया जाए तो ज्यादा फायदेमंद होगा। फारेन इन्वेस्टमेंट जब आएगी तो नयी तकनीक आएगी, लोगों को एम्प्लायमेंट मिलेगी और उसके साथ-साथ डैवलपमेंट होगी और जो इन-वैस्ट करेगा, उसका भी अपना इंटरैस्ट इनवाल्व रहेगा और वह देखेगा कि वह घाटे में न चले और इससे ज्यादा से ज्यादा उस इलाके की डैवलपमेंट हो सकेगी। जो आज हम ऋण लेकर इंडस्ट्रीज लगाने की बात सोचते हैं या इन्फ्रास्ट्रक्चर क्रिएट करने की बात सोचते हैं, वह अगर फारेन इन्वेस्टमेंट के माध्यम से लाए तो मैं समझता हूँ कि फारेन डेट भविष्य में कम होगा। और इसके साथ-साथ महोदया, मैं पूछना चाहूंगा कि फारेन लोन के डिसबर्समेंट में जो देरी होती है... करीब 12.50 मिलियन डालर से भी ज्यादा लोन का अमाउन्ट पड़ा हुआ है जिसका कि डिसबर्समेंट नहीं हुआ। डिसबर्समेंट न होने से क्या होता है कि उस प्रोजेक्ट की आस्त बढ़ जाती है। कई प्रोजेक्ट्स ऐसे हैं जहाँ डिले हुई है, वहाँ पर 50 परसेंट से ज्यादा ओवररन हुआ है। इन चीजों को कंट्रोल करने के लिए, बेनिफिशरीज को वह जल्द से जल्द दिया जाय। इसके लिए उचित व्यवस्था होनी चाहिए और इसकी प्रापर मोनिटरिंग होनी चाहिए।

महोदया, हमें डेट सर्विस रेशियो को कम करने के लिए और बैलेंस आफ पेमेंट को बैलेंस करने के लिए अपने एक्सपोर्ट को बढ़ावा देना चाहिए। पर एक्सपोर्ट को बढ़ावा देने के लिए हमें एक चीज को मद्देनजर रखना पड़ेगा। हमारी नयी आर्थिक नीति के तहत हमने बहुत सारी चीजों के रैमैटीरियल को इम्पोर्ट करने की परमीशन ली है, को-जी०एल० में परमीशन ली है। पर देखने में यह आया है कि हमारी डोमेस्टिक रैमैटीरियल मार्केट

मैं और हमारे डोमेस्टिक प्रोड्यूसर जो है, चाहे उसे हमारी खुद की सरकार ही क्यों न प्रोड्यूस करे, रा-मैटीरियल की कीमत ओ०जी०एल० के माध्यम से इम्पोर्टेड रा-मैटीरियल जो आता है, उससे ज्यादा होती है। इसलिए उस कच्चे माल से पक्का माल बनाकर, फिनिश प्रोडक्ट बनाकर अगर हम उसको एक्सपोर्ट करना चाहते हैं तो वह नहीं कर सकते क्योंकि हम दूसरों के सामने मार्केट में कम्पीट नहीं कर सकते हैं। वित्त मंत्री जी को इन सब चीजों को मद्देनजर रखते हुए हमारी भारत सरकार के तहत जो विभिन्न मंत्रालय है, चाहे स्टील मंत्रालय हो, चाहे पेट्रोलियम मंत्रालय हो, चाहे माइंस विभाग हो, इस सब का प्राइस फैक्टर एक बार असेस करना चाहिए, रिव्यू करना चाहिए। अगर इनकी कीमत इम्पोर्टेड रा-मैटीरियल की लैडेड प्राइस से ज्यादा है तो वह कम होना चाहिए। अगर ऐसी व्यवस्था करेंगे तभी हमारे डोमेस्टिक मार्केट के मनुफ़क्चरर्स फारेन कन्ट्रीज के मनुफ़क्चरर्स के साथ कम्पीट कर सकेंगे।

महोदया आज की आर्थिक अवस्था में यह एक नया कुप्रचार हो रहा है कि मल्टीनेशनल्स आकर देश में इन्वेस्टमेंट करके हमारी यहां खराबी करेंगे और इसके कारण डोमेस्टिक मार्केट में बड़ी कटौती आ जाएगी, ऐसा कुप्रचार हो रहा है। मैं कहना चाहूंगा कि यह जिस इन्वेस्टमेंट की बात कर रहे हैं, उससे घबराने की जरूरत नहीं है। हम आज भी युग-युगान्तर से सुनते आ रहे हैं, अगर किसी डाक्टर के पास कमजोरी का इलाज करने के लिए कोई बूढ़ी औरत जाए, बूढ़ा आदमी जाए तो वह डाक्टर क्या टानिक लिखता है, हालिक्स। हालिक्स क्या है, मल्टी-नेशनल। दादी मां के टाइम से सुनते आए हैं जब बच्चा घर में पैदा होता है कि इसको ग्राइप वाटर दो, बुडवर्ड का ग्राइम वाटर, यह क्या है मल्टीनेशनल। मां का दूध नहीं उतर रहा है, बच्चे को क्या पिलाना है, लैक्टोजन पिलाना है, फीरेक्स पिलाना है। ये क्या है मल्टी-नेशनल। टूथ पेस्ट लाना है तो कोलगेट का ले आयेंगे। कोलगेट क्या है मल्टीनेशनल ये मल्टीनेशनल क्या लूट के ले जा रहे हैं आज किसी घर में कोई जवान लड़की है,

विवाह करना है तो पूछेंगे कि लड़का कहां नौकरी करता है। क्या किसी मल्टी-नेशनल कम्पनी में नौकरी करता है। अगर करता है तो उसकी फर्स्ट प्रायरिटी है क्योंकि वहां सर्विस सेक्योरिटी है। .. (व्यवधान) .. आप इसको स्वीकार करिए। युग-युगान्तर से यह चल रहा है। श्री मनमोहन सिंह के वित्त मंत्री बनने के बाद ये नहीं आए। ये कंपनियां, हमारी दादी मां के टाइम से हम इनके बारे में सुन रहे हैं हमारी तो दादी के बाल सफेद हो गए, सुनते सुनते यह जो हवा खड़ी की जा रही है कि फारेन इन्वेस्टमेंट आ रहा है इसके विरुद्ध इसका क्या औचित्य है। फारेन इन्वेस्टमेंट चाहे वह इन्फ़्लारट्रक्चर टेक्नालाजी के लिए हो चाहे देश में इंडस्ट्री बनाने के लिए हो, चाहे देश में सड़क बनाने के लिए हो.....

या पेय जल की योजना हो, इरीगेशन प्रोजेक्ट हो, एयरपोर्ट बनाने के लिए हो, यह जितना भी पैसा है अगर यह फारेन इन्वेस्टमेंट में आता है, मैं नहीं कहता कि यह जरूरी है कि गोरों से लाइये अगर हमारे भारतीय सक्षम हैं, एन०आर०आई० सक्षम है तो फर्स्ट प्रायरिटी उनको दो जाए। उनको ले आइये। बहुत सारे लोग हैं। बंगाल के लोग हैं, बिहार के लोग हैं, महाराष्ट्र के लोग हैं, पंजाब के लोग हैं, साऊथ के लोग हैं, उड़ीसा के लोग बसे हुए हैं। अरबपति हैं। उनको ले आइये। उनको सुविधा दीजिये (व्यवधान) वह अस्वीकार कर रही हैं कि उड़ीसा के पैसे वाले नहीं हैं। वहां बहुत बैठे हैं। तो उनको आप ले आइये, उनको आप फर्स्ट प्रायरिटी दीजिये। टैक्स बेनिफिट दीजिये। सब से पहले उनको आप सिक्युरिटी दीजिये। अब हम तुलना करने लगते हैं अपने देश की मैक्सीको से। मैक्सीको कितना बड़ा देश है? कितनी पापुलेशन है? तुलना करने लगते हैं ब्राज़ील में, अर्जन्टीना में। यह क्या देश है? आपकी फिलार्स्फी है, आपका देश है (व्यवधान) कोरिया से भी मत करिये, सिंगापुर से भी मत करिये, ताईवान से भी मत करिये। मैं तो नहीं कह रहा हूं कि आप तुलना करिये। भारत को तुलना सिर्फ भारत से हो सकती है। भारत क

तुलना और किसी से नहीं हो सकती है।
 (व्यवधान) विदेशी कर्ज के बगैर काम नहीं चलता। आज तो क्रेडिटवर्दीनेस रिपोर्ट खराब हो जाए तो आप सड़क पर नहीं चल सकते। आज तो बड़े बड़े सेठ साहूकार शान महसूस करने हैं कि हमारी क्रेडिटवर्दीनेस रिपोर्ट अच्छी है। किसी का पोर्टेफोलियो अच्छा है तभी तो कोई कर्ज देता है। भारत माता का पोर्टेफोलियो है। यह मैं नहीं कहता कि डा० मनमोहन सिंह कर्ज ला रहे हैं। देश का पोर्टेफोलियो है, तभी कर्ज मिल रहा है, नहीं तो नहीं मिल सकता है। (व्यवधान) सोना तो आप लोगों ने नीलाम करवा दिया था, सोना भी कर्ज पर लगा दिया था, लंदन भिजवा दिया था। वह तो वापिस वे आए हैं। अब काहे को बूझ रहे हो (व्यवधान)

DR. BIPLAB DASGUPTA: It was Mr. Chandrashekhar who did it. He was supported by your party.

SHRI S. S. AHLUWALIA: Why Mr. Chandrashekhar, what happened in those eleven months?

DR. BIPLAB DAS GUPTA: All that gold was sent under the Prime Ministership of Mr. Chandrashekhar, who was a proxy Government of the Congress Party.

SHRI GOPALRAO VITHALRAO PATIL: And what happened in those 40 years? That was your own creation.

THE VICE-CHAIRMAN (MISS SAROJ KHAPARDE): It is not fair. You go on interrupting him. Please, let him complete.

श्री मोहम्मद सलीम (पश्चिमी बंगाल) :
 विषय पर आ जाओ तो ठीक है लेकिन मल्टीनेशनल को... (व्यवधान)

उन्होंने अपने फाइनेंस मिनिस्टर से क्या कहा--

You come out of your dark room and see the light of the entire world.

श्री मोहम्मद सलीम : उनके दिखाए रास्ते पर चलिये (व्यवधान)

श्री एस० एस० अहलुवालिया : वह तो हमारे ही दिखाए रास्ते पर चल रहे हैं (व्यवधान) यही कारण है कि जो सच्ची बात बोलने के लिए सामने रखी जाए तो इनकी कण्ठ होता है। सब से बड़ी जरूरत इस चीज की है कि हमारे देश की आर्थिक व्यवस्था तभी सुदृढ़ होगी जब हमारे राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होगा, जब हम सब अपने आपको भारतवासी समझेंगे। परन्तु आज हम एक दूसरे को पहले तो धर्म के नाम पर बांटते हैं, फिर जाति के नाम पर बांटते हैं, फिर भाषा के नाम पर बांटते हैं और फिर पार्टी के नाम पर बांटते हैं। यह पार्टी के नाम पर बांटते हैं तभी आज हम रो रहे हैं, यह कहना है कि कर्ज उनका है, इनका है। यह कर्ज भारत का कर्ज है और भारत का कर्ज कोई जब में डाल कर नहीं ले जा रहा है। 90 करोड़ जनता के स्वास्थ्य के लिए, शिक्षा के लिए, पानी की व्यवस्था के लिए, सोशल सिक्योरिटी के लिए यह पैसा खर्च हो रहा है। कोई लपेट कर पैसा घर नहीं ले जा रहा है। यही कारण है कि सीधा रास्ता ढूँढ़ने की जरूरत है। किस तरह से विदेशी कर्जा कम हो, यह सुझाव देने की जरूरत है। मेरा मूल सुझाव यह है कि फारेन इन्वेस्टमेंट को बढ़ाइये और एक्सपोर्ट को बढ़ावा दीजिये। इसी तरह से आप डेट सर्विस रेशियो को कम कर सकेंगे, बी०ओ०पी० को कम कर सकेंगे। आज के दिन में इन चीजों पर हम गौर नहीं कर रहे हैं तो कर्जा उतारने के लिए और कर्ज के इंटरैस्ट को पे करने के लिए हमें कर्जा लेना पड़ रहा है, वह हमें बंद करना चाहिये। यही कह कर धन्यवाद।

श्री एस० एस० अहलुवालिया : मल्टी-नेशनल की बात तो सही है (व्यवधान)
 अरे भाई ज्योति बमु से पूछो जा कर

SHRI ASHOK MITRA (West Bengal): Madam Vice-Chairperson, in a setting of half empty Benche or three-quarters of empty Chamber, we are discussing the issue of external indebtedness which is perhaps the most important and the gravest issue. I would say, that this country is confronted with. But this is our *kismet*. I am amused that the Finance Minister keeps on telling the nation that he has now a kitty of \$20 billion or maybe \$25 billion of foreign exchange reserves. But this is selective amnesia, he doesn't say that our total foreign indebtedness is nearly as much as five times, \$96 billion. He might say \$92 billion, but it is in that neighbourhood and very soon we will be crossing the border of \$100 billion. Certainly amongst the Third World countries, we are now the third leading debted country. We know what is the impact of this and debt service obligations. We will be shelling out every year \$10 billion, \$11 billion and next year 1996-97, it will be \$14.5 billion. Now, let us assume that next year your exports will touch \$29 billion and that means 50 per cent of our export earnings will have to be set aside for debt servicing. It is doubtful whether your exports will really touch \$29 billion. This is going to be the story from now on because whatever the Finance Minister might, say we are in the throes of a debt trap. We cannot really make our both ends meet. Even to meet this debt servicing obligations, we have to borrow for the pressure on him would be relentless. He has opened up the economy. The rich in the country have got their kingdom. They want to buy an indefinite quantity of goods from overseas and he has to finance that. That is why there are more and more, borrowings. This is the overall scenario.

But I think it is necessary that we should go back and search for the objective reasons, objective factors

which have led us to this situation. We don't have to go back very far. Let us take 31st March, 1984, that is, 11 years ago, thereabouts. The total external debt of our country,—long-term debt, medium-term debt, and there is a danger of short-term debt—is \$31.9 billion. I am quoting figures from the Annual Reports of the Reserve Bank of India. Therefore, they have to be authoritative. The 31st March, 1984 is the benchmark date. Then, let us come to exactly five years later, the 31st March, 1989. That debt has jumped to something like \$63 billion or \$64 billion. It has doubled. Out of this \$57 billion both short-term debt and medium term debt, you add \$6 billion of short-term debt roughly. Now \$39.1 billion in 1983-84 was roughly about 11 to 12 per cent of our national income. When you come to this particular year, 1988-89, you find that since though the foreign debt has doubled, yet your national income has increased by about 25 per cent. We find that suddenly about 30 to 35 per cent of your national income will be given into the foreign debt that you are already entrapped into. How does this thing come about? This is the coincidence. I think, Dr. Joshi, towards the end of his speech has mentioned about self reliance.

That was the phase when we ditched self-reliance. It was from 31st October, 1984 when the new regime was installed. From then on, it was "borrow and spend", "borrow externally and spend overseas", "buy from overseas" and "do not worry about the consequences". This is what has happened. It was in the course of that four and a half years that your foreign debt jumped from 31.9 billion to 64 billion dollars. This is non-defence. I am not including the debt on account of defence because the figures are not available from 1983-84. The figures are available only for the subsequent period. The trend was set then and we cannot really get out of that trend. I think it is important that I mention here the political propaganda that the Govern-

ment that was there in the year 1989-90 made the country bankrupt. No. No, Mr. Finance Minister. It was the regime that was there from 1984 to 1989 that really ensured that the country reached the verge of bankruptcy and your total foreign exchange kitty dropped down to one billion dollars. And at that stage, you decided that you would surrender to the foreign institutions which you did. Then, out of their kindness, your one billion dollars have jumped up to 96 billion dollars. But where do we go from here? With an overhang of 96 billion dollars and the annual repayment obligations of 10, 12, 13, 14, 15 billion dollars, it will go on. How do we extricate ourselves? I have read some of the statements of yourself and your colleagues that you will try to promote exports. Let us take the general international economic conjecture. Look at the Europe. It has 12-13 per cent unemployment. There are 25 millions currently unemployed. They are desperately anxious to sell their goods to the third world countries. Can you imagine the Chancellor of the Exchequer from Britain coming? What does he do? All those ministers are now working as travelling salesmen canvassing. "Buy our goods, buy our goods". They are not interested in buying your goods. The same story is repeated with the United States of America. They are a nation in decline as far as technology is concerned. They had been snubbed by Japan. And they know that very soon they will be at the receiving end from both Korea and China. It is an easy-going nation. So, from five-day weeks, they have descended to four-day weeks. In many parts of the USA they are appealing to the workers to voluntarily agree to three-day weeks so that some more employment may be created. They are dead against the entry of foreign goods into the country, particularly from the Asian countries. You have the US trade law, the Special 301 and the Super 301. This is the reality. They want to capture international organisations to use them as instrumentalities for pulling us for acceptance. This is the whole ap-

partus of the W.T.O. Now, it is supposed to represent the interests of the nations of the world. But look at the Director-General of WTO who was visiting. He was speaking as if it was the voice of the United States of America, it was the voice of West Europe. Asia does not occur, Africa does not occur and the concerns of Latin America do not occur because this is a biased institution. All these institutions are instrumentalities of western capitalism. They see how they can save themselves, how they can survive and we are falling into their trap. We have willingly walked into their parlour saying, "We will abide by whatever you say, but please ensure that the standard of living of the top ten per cent of the Indian community is somehow protected". Would you be able to expand your exports? I can see the underlying theme "Never mind, we will push agricultural exports". This is where I think you will be ruining further the economy..... and the prospects of your party. Now, what have you been doing? It is not correct to say, "All right, we will export superior foodgrains". But, all foodgrains move in pathetically. If you export superior foodgrains, their supply becomes scarce in the country and once their supply becomes scarce, the supply of all foodgrains will become relatively scarce and the prices start rising. If the prices of foodgrains start rising, the prices of commercial crops also start rising. The poor Mr. Koraiah, who is symbolic of the plight of the handloom weavers, is made to sit in the very last bench of the ruling party. He has been crying hoarse day in and day out over the past two years and trying to draw the attention of the hon. Members to what is happening to the handloom weavers the plight of millions of handloom weavers in the country because the Government quite cynically and unscrupulously has kept on exporting cotton and cotton yarn and the prices rose and there are shortages. As a consequence of shortage, it is the poor who suffer. You said that you are going

[Shri Ashok Mitra]

to export foodgrains and you are going to export raw cotton. You have even started exporting pulses. Now, this is astonishing. At least in the case of other foodgrains and other commercial crops, you could say that the rate of growth has kept pace with the rate of growth of population. But, in the case of pulses, in the late forties or in early fifties, the production of pulses was nine million tonnes to ten million tonnes. Today, at the end of forty-five years, we have inched up to thirteen million tonnes or fourteen million tonnes. The production is in the range of thirty per cent or forty per cent whereas our population has gone up by 200 per cent. At the same time, pulses is the only grain from which the poor get protein and you are trying to export even pulses of which we are in short supply because it is a question of somehow or the other trying get some extra foreign exchange. But, what will happen to your rate of inflation? There are two major factors which affect the prices. The first factor is the flow of hard money and if you have to hand over to them some domestic fund, then the money supply goes up. But the basic factor still happens to be the increase in prices. You know the kind of cynical game which the Government is playing for the past few weeks. Shri Murli Manohar Joshi made a reference to inflation receipts. He said that the inflation receipts are very good, the inflation is going down and all the media, roughly a bunch of unthinking people, who write out the handouts for the Ministry of Finance, have been saying so. This is what they do. The wholesale price index goes on rising. So, for the last twenty weeks, the prices have gone up and relentlessly, and you cannot blame the poor housewives. This is the situation. I would say that this is no solution to say that you will push up exports. You may try to foist it and you will meet tremendous resistance from the Western countries where you want to sell your goods and you have to try

to relax your terms of trade. Shri Murli Manohar Joshi referred to the depreciating rupee and said that it would continue. You will say: "All right, please buy some of our goods." The word 'please' will be a little more humble and for soliciting their favour. Now, there is no salvation that way. You cannot really find it. At a certain juncture, they will say: "No, nothing doing. You have to surrender more of your interest before we can allow you to send another 100 million dollars' worth of your goods." (Time Bell) Shall I sit down?

THE VICE-CHAIRMAN (MISS SAROJ KHAPARDE): No, your party was allowed nine minutes.

SHRI MD. SALIM: Very few speakers are there.

7.00 P. M.

SHRI ASHOK MITRA: All right. I won't hurt anybody's feelings.

THE VICE-CHAIRMAN (MISS SAROJ KHAPARDE): No, I did not mean that. I only request you to try to be brief.

SHRI ASHOK MITRA: Okay. In fact. I myself have an appointment, I have to runaway. So, let me see what happened. Now I have just two suggestions for the Finance Minister. Number one is this. You see, the exports would not provide you much of a way-out. The international conjecture is against you. Why didn't you try what the Latin American countries did in the '80s? In Argentina, Mexico, Brazil, they demanded of the Western Governments that the total burden of foreign debt must be scaled down. After all, we are at a tremendously advantageous position because we owe them more than 96 billion dollars! If we do not pay them a penny, what can they do? They will not dare to march their troops into our country and bomb our territories because we are not repaying them. You had enough bargaining advantage. You had a bargaining position.

So, stall them. With this magnitude of foreign debt, this country will never be able to develop. You see it is choked and throttled. Therefore, if you want that we pay or honour our debts, you must allow the debts to be scaled down and there must be some effort. But this kind of thing you cannot do in isolation. This you can do only if you try to rebuild the third-world alliance. And this is something which you have sabotaged, which was sabotaged in April, 1989. I do not want to go into the history. You have to rebuild the faith, mutual faith. That is the way you can do it.

Now I can also mention something else which Fidel Castro suggested: "After all, what is all this foreign debt? It is mostly an accumulation of interest on some debt which was forced upon us because we were in difficulties. This is all immoral. This total mess of foreign debt is immoral. We should repudiate it." I do not say that. You see, with all his best efforts Comrade Manmohan Singh can never be a Fidel Castro. Therefore, I would suggest to him that... *(Interruptions)*...

DR. MURLI MANOHAR JOSHI: This is what you want him to be... *(Interruption)*...

SHRI ASHOK MITRA: Even if you had wanted to do it, you would never be able to do it. So, I would say, don't do that. But what is within the realm of practicality, just try to do that; just open a second front so that you can save your external accounts.

My final point is, whether you do something or not, I know and you know, and the whole country knows that your Government is on its way out. I can give you another six months, plus or minus two months this way or that way. Therefore, I would appeal to you, consider yourself as a Caretaker Government and do not

enter into further substantive commitments which harm the interests of the nation such as conceding the entry of American insurance agents into the country or giving more concession to the British banks and such else or the kind of thing which now the External Affairs Minister has glibly said in this House: "All that doesn't matter. We will keep the mail box open. He did not understand the simple thing that if you keep the mail box open, then there is a certain sequence of priorities that you establish. The fellow who applies first will have a demand on the products. That is a simple thing on which the Government is faltering and floundering. He does not know its bearings. You know. So, I say, all right, you have done enough harm to the country, but please for the next six months do pause. Thank you.

SHRI S. VIDUTHALAI VIRUMBI (Tamil Nadu): Madam Vice-Chairperson. I thank you for giving me an opportunity to deal with this important issue. Madam, our hon. Ashok Mitra, more or less, has drawn a picture as to where this Government will lead the country. Whenever this type of discussion takes place, from the Opposition side we always raise some doubts and give some suggestions in regard to what is the best for the nation as per our knowledge. Our hon. Finance Minister conveniently used to forget the queries and issues raised by us. Sometimes, he keeps a stoic silence. As far as the Minister is concerned, I am not doubting his personal integrity. But, unfortunately, it is like a good lawyer advocating a bad case. When I raised this issue during the Budget discussion, I had pointed out that the Australian Government had fixed some basic amount for personal income-tax exemption in consultation with the employers and the employees. This basic amount in respect of personal income-tax exemption is increased every year in accordance with the inflation that takes place. Why shouldn't we follow that? Then the salaried class need not depend on the political parties or any Finance

(Shri S. Viduthalai Virumbi)

Minister. I did not get any reply from the Finance Minister to that.

As regards bringing down the pulses, I requested the Finance Minister to release dollars to the tune of five billion. If you release five billion dollars from twenty billion dollars, which you are holding, it will take away Rs. 15,000 crores from public circulation. It will go to the coffers of the banks, which will reduce the money supply by 10 per cent and bring down the prices. Suppose the suggestion I made was incorrect but Finance Minister could have dealt with it or explained it away or, at least, he could have agreed to it. Neither had he disagreed with it nor had he agreed with it. That is the problem.

Eight hundred and fifty people with an income-tax arrears of more than Rs. 1 crore are there. What action has the Government proposed to take to realise the money from them? I could not get any answer. Therefore, it is not with any hope that I am standing here now. Now I am standing here to perform my duty in this democratic forum.

As far as the foreign debt is concerned, we used to say that 1991 was a black year. Because of the policy pursued in that year the whole country has collapsed. The policy, which is fraught with some intention, is being propagated throughout the country from the Himalayas to Kanyakumari, day in and day out. Our foreign debt was 83.96 billion dollars in 1990-91. It was 85.33 billion dollars in 1991-92. It was 89.99 billion dollars in 1992-93. It was 90.72 billion dollars in 1993-94. It was 90.45 billion dollars in 1994-95. It was only 31 billion dollars in 1984. It was only 43 billion dollars in 1989. But it was 90.45 billion dollars in 1994-95! There was an increase of 7 billion dollars from 1990-91 to 1994-95. After the announcement of the liberalisation policy—they said that it was going to remove all these problems—our foreign debt has increased. This is the situ-

ation. When you assumed charge as Finance Minister the total debt, the debt payment as well as service payment, in terms of percentage of GDP was 30.5 per cent. Now it stands at 36.11 per cent. Where have you led the country for the last five years? When we ask this question we do not have any personal animosity against you. What we feel is that if we do not do this, we are doing a disservice to the future generation. I am putting this question with anguish. When we asked about it, he said, "we don't have money to invest. There is a lot of unemployment. If we create employment investment and for investment we have to invite foreign companies". That is the reply we got from the Treasury Benches. They say that India is a poor country. I don't agree that India is a poor country. India is a rich country with poor people. Our country is actually rich, but we are poor. Our income is less because we are poor. As our income is less, our saving is less. As our saving is less, our investment is less. As our investment is less, our production is less. When production is less, income is less. So, it is a vicious circle. To break this vicious circle you had suggested that we have to resort to foreign investment. These are the questions which are posed by the Treasury Benches. Our reply to these questions is this. According to a school of thought, there is black money of more than Rs. 40,000 crores in our country. When the Government is so much interested in getting foreign investment from more than 170 countries, what action did it take to unearth the black money that is already available in India? Had you tried to unearth this black money in a proper way, you would not have gone in for any foreign investment. That is my argument. I hope the hon. Finance Minister will say something on this aspect; otherwise we should forget about self-reliance.

If we export value-added products, we will get more income. Instead of exporting iron and steel products we are exporting iron ore. To the best of my

knowledge, iron ore is being exported. Had we exported value-added products, we would have got more foreign exchange.

What is happening in the name of liberalisation? You don't know it. Some five years ago, a poor person like me was to pay Rs. 2/- for a cup of coffee outside Parliament. Now we have to pay Rs. 4/- for one cup of coffee. Why? Previously, when there was scarcity, people used to steal coffee available in India. We could not stop it. Why? We could not stop it because of your policy. When we needed coffee, you had exported it. You did not care for the people who actually elected you. They relied upon you. They thought that you were the best among the political parties available at that time.

What is the position of paper? Mr. Jagmohan has raised this issue today. Six months ago, it was Rs. 28,000/- per tonne. Within six months it had gone up to Rs. 42,000/- per tonne. What is the price of note books and exercise books? How can the parents buy note books? How are you going to achieve 'Education for All by 2000 A.D.'? How are you going to achieve this target? This is the position. I feel that whatever you say is not going to materialise. Your liberalisation policy is not going to save the country. Only yesterday we raised an issue regarding the Patents Act. The hon. Minister said that a mail-box would be there. People could send their mail. When this Act is not going to be passed, who would take action? To the best of my knowledge, once India signs this agreement, if somebody mails for the patent, whether we reply to it or don't reply to it, he will have market access for a period of five years. Whether we agree to it or don't agree to it, they will have it. They wanted to hide this particular aspect. Once the mail-box is opened, they will send applications. Whether you agree to it or don't agree to it, they will be entitled to enter into India and capture the market. What are you going

to do about it. I feel that the Avadi socialism or Pt. Jawaharlal Nehru has been completely buried at the Tirupati Congress under the auspices of Shri P. V. Narasimha Rao and in the presence of the Finance Minister. They have buried the Avadi socialism. I think it is very difficult to improve the situation until and unless they are unseated. I hope, when the elections are there, people will perform their duty; they will relieve them of this burden. I hope the hon. Finance Minister will answer all these questions.

SHRI VAYALAR RAVI (Kerala): Madam Chairperson, I fully agree with comrade Ashok Mitra when he says that the Finance Minister cannot be a Fidel Castro. But he has ignored one fact. He is following in the foot steps of Mr. Deng Xioping of China. Madam, the question is very important and we should have a high level discussion on it. I hope the Finance Minister would reply to it and further enlighten us. After the new economic policy was introduced, market economy has become predominant and it works. I had put a question yesterday. Everyday, the *Economic Times* reports that profits have gone up in the case of every industry, every factory and every product. This is not because productivity has increased. But it is because the prices have gone up. Naturally, the Government has taken a conscious decision to import so as to bring down the prices. This is a vicious circle. Imports will cost you more. Last year, it was to the tune of Rs. 1,500 crores. This year, it may cross Rs. 2,600 crores. Naturally, we cannot live on imports. The debt can be cleared only by making more money and by improving the balance of payment situation. At the same time, the hon. Member is forgetting certain facts. The data here says: The debt-service payment in 1989-90 was 31 per cent. In 1990-91, it was 3.2 per cent. In 1991-92, it was 29 per cent. In 92-93, it was 30 per cent. In 1993-94, it was only 24.8 per cent. It means that the debt-service ratio has come down. This

[Shri Vayalar Ravi]

is a good sign. This three lakh crores of rupees. Expended debt cannot be wiped out in a day. The compulsions have been explained by my friend, Mr. Ahluwalia. I am not disputing that. But, at the same time, I appeal to the Finance Minister not to have a complacent attitude thinking that we can get out of it any time. I would like to share with the House my experience. I had a dialogue with our former President Shri R. Venkatraman. He narrated an incident that took place when he was the Finance Minister. The World Bank people had gone to him to discuss some loan arrangement. He said that they tried to put some conditions like devaluation and things like that. He immediately told them that a Cabinet decision was taken and he did not want the money. They casually asked him, "How are you going to face your import requirements"? He said, "I will stop all imports except the imports of inevitables. I can live for two years without the import of certain items and I can save my money". I think that was a good message given to the World Bank. I hope that kind of an attitude is adopted. On the one side you have to control the domestic prices and to control the domestic prices you allow for market economy. Now, every industry wants to go to the stock exchange and show that the index is going up. In that process the prices go up. This affects the agricultural products and the consumer products. What does the Government do to protect the interests of the consumers? They import. Then the imports are more than the exports and the BOP situation becomes negative. I appeal to the Finance Minister to control imports as much as possible. See that exports pick up. Only then can you make the BOP positive instead of negative. Today it is negative. Only then can you clear your debt. We will not default in making the debt-service payment. The only way we can do this is by controlling imports. Imports are very frequent. We are importing edible oil and every other thing. I do not know the purpose. Everything is being imported. We are making the people crazy for foreign goods. On the one side, you are

creating an atmosphere which is encouraging the craze for foreign goods and on the other side, you are increasing our indebtedness. I hope the Finance Minister would take serious note of this kind of craze for imported goods. He should control it as much as possible to see that the balance of payment position is positive. It is only then that you can face the challenge of external debt.

THE MINISTER OF FINANCE (SHRI MANMOHAN SINGH): Madam, I am very grateful to all the hon. Members who have spoken on the subject of external indebtedness of our country. I am not going to deny that we have a debt problem. I have never been complacent. But one thing I do want to say that gravity of the debt problem. It is too late in the day to go into how we got there. But one thing I do want to say that the history of the world shows that borrowing *per se* is not bad. The infrastructure of North America, of the United States, of Canada, was largely built in the 19th century by borrowings from the then industrially rich and advanced Western Europe. A lot of foreign investment and loans went to Australia. In the same way, I would like to say that South Korea, until 1980, borrowed very heavily in the international markets. The real issue is: What use is made of that borrowing? Now I would be the first one to admit that the productivity of resource use in our country has not been as high as it should have been. In fact, I would like to submit that—Dr. Ashok Mitra is not here—whether we like it or not, the international economic system has not treated India that badly. When people talk about the international system, they talk of the sharp decline in the terms of trade of the Latin American countries, they talk of a sharp decline in the terms of trade of Africa. But India, because of a diversified economic structure, because of a diversified foreign trade structure, has escaped this general phenomenon of a secular decline in its terms of

trade. The second thing I would like to say is that until very recently, large amounts of money have come to this country by way of aid or assistance, concessional assistance, the period of repayment being 40-50 years and at zero rate of interest also. In spite of all that, if we are where we are, I would respectfully submit that the reasons are to be found within our own country—the continued low productivity of resource use, the way we manage our economy, public sector as well as private sector. We have to take appropriate steps to improve the productivity of resource use. We are today a country which saves about 22 per cent of its gross national product. We invest about 24 per cent of our gross national product. We should have got much more growth rate out of these savings and investments than we have got. Until 1980's, our growth rate was not more than 3.5 per cent. With a population growing at the rate of 2.2 per cent there is very little left to improve the standard of living. I would respectfully submit that we have a debt problem. We have the internal debt problem and we have the external debt problem but there are no short-cuts to it. The standard of living of any nation, in the final analysis, as my old teacher, Sir Roy Harrod used to say, is a matter of high productivity. Therefore, there is no way in which you can become rich unless you improve the productivity of resource use. I am not going to argue that public sector is bad or private sector is good. I think in both these sectors the overall productivity of resource use in our country has not been what it ought to have been. If you look at the rate of return on the public sector investment in nominal terms, we got only a two per cent return. If you deflate it by inflation and take into account the depreciation at real costs, this is a case of negative value addition. Can any country become rich like this? We borrow internally, we borrow externally. But if we use these borrowings in a manner in which there is a negative net value added, this is a road to impoverishment. You cannot blame borrowings for that. You must look at the root cause of this, the way this country's

economy has run, the underlying productivity of resources. In the same way, in the private sector, people have been talking about profits. Over the years, it was so easy to make profit in a country where you had an economy totally isolated from the rest of the world. Nothing could be imported into this country unless somebody in the Ministry of Commerce gave a permit. Therefore, it was a field-day for everybody to make money even when the quality of his products was low, even when the cost of production was low. No country in the world, whether it is developed or developing, today has the tariff rates as we have, for example, (Interruptions)... and that was an open invitation to inefficiency, complacency and perpetuation of low standards of quality and low standards of technological attainments. You cannot achieve technological self-reliance unless you know, what is happening outside in the know, what is happening outside in the world. It is fashionable to quote Gandhiji. But recently I was reading a very fine book which quotes Swami Vivekananda and I was struck by what Swami Vivekananda said about India's decline and how in the last one thousand years India has not taken adequate care to compare itself with the rest of the world, and find out why we have lagged behind while Western Europe had the Renaissance, technological revolution, industrial revolution, that we have been preoccupied with and why we have been excessively inward-looking. If India is to survive and flourish in a harshly competitive world, where every five years there is this talk of human knowledge being doubled, I sincerely believe that this cannot be done by shutting ourselves from the rest of the world. I agree with Dr. Joshi that India is a country of tremendous ability, tremendous potentiality.

Free our people from those restraints which stood in the way of realising that great creativity of our people. But, at the same time, it is essential for our people to know what is happening, to take pride that we can also look everybody else straight in the face. This old mentality—that because we are a poor

[Shri Manmohan Singh]

country, we must erect tariff walls, we must protect ourselves excessively from the world, that we are somehow inferior to the White races; I think, this psychology—has hurt, this psychology has prevented the flourishing of the Indian creativity which I find in abundance. Why do Indian engineers have to go to the Silicon Valley to show to the rest of the world that they are second to none? Today, we have large stock of technological manpower in the area of bio-technology. But I have seen, when I was the Chairman of the University Grants Commission some four years ago, that nearly 80 to 90 per cent of our technologically trained bio-technologists end up in the service of multi-nationals in the United States. We have, therefore, to create conditions where our people, who are interested in science and technology, who are properly qualified as engineers, have the opportunity to flourish, to grow to give their best to their country. That is the way this country can deal with its economic problems.

DR. MURLI MANOHAR JOSHI: In the Department of Bio-technology, one of the Joint Secretaries has been sitting on promotions and on the development of this.. (Interruptions)

SHRI MANMOHAN SINGH: Well, there may be many problems. I am just dealing with the general thing.

But the first thing that I do want to submit to this House is: let us all work together to deal with the root causes of the problem and, that is, the persistent low productivity, of scarce resources, in our country.

The second thing that I do want to say is that as far as external debt is concerned, the only way in which you can reduce the external debt is that you should have a surplus on the current account. There is no other magic formula by which you can retire debt. There are two ways to do it. We can overnight create a surplus if we could shut ourselves from the rest of the world, if

we could cut our imports drastically. When we were faced with the economic crisis in 1991, we did that because we were in an emergency. But then, we also saw the results of that. The growth rate of the economy fell to one per cent. The inflation rose to 20 per cent. We had a regime of falling production, rising unemployment. Therefore, we needed a more balanced strategy. Our strategy is a gradualistic transition to a stage where some day India should be able to have a current account surplus. In the initial stages what we had sought to do is to reduce this current account deficit to a more manageable level which can be financed and I would respectfully submit, without going into what happened in 1991 or before, if you look at the figures of the last four years there has been a dramatic improvement in the current account deficit. There has been a very significant decline in the rate of growth of debt. But, debt has been growing. So long as we have a current account deficit we have somehow to finance it. Now, here our strategy has been two-fold: to minimise our dependence on external debt and also, in the meantime, to go to the root of the problem. Shri Ahluwalia mentioned that to substitute debt by those types of flows which do not give rise to debt service liability and that is why we are trying to switch-over, to the extent that is possible within the limits of prudence, from foreign commercial borrowings, which are very expensive and which are also very risky beyond a point, to direct investment. The direct investment has the advantage that if a project does not earn a decent profit, there would be no flow back by way of dividend and repatriation. Therefore, there is less burden associated with direct investment than with commercial loans, and that is precisely what we are trying today i. e. over a period of time we must so manage our balance of payments that our current account deficit does

not grow, but it declines, and in the meantime, of course, we have to finance it. So, some recourse to external borrowing is essential, but there too our effort has been to borrow on terms and conditions which are least burdensome. In the eighties, India borrowed very heavily from the commercial market, from the commercial banks. The logic of compound interest soon caught up with us, but in the last four years, we have tried to minimise recourse to commercial borrowing, to the maximum possible extent. Now, there are pressures, certain projects are coming up and if we use the money wisely, I honestly feel that there is no harm in borrowing, provided we have the assurance that these moneys will be used to increase productivity, to increase production of such important things as power and other vital infrastructure-related items.

Shri Vayalar Ravi mentioned the need for curbing imports. I respectfully submit that no nation can live beyond its means. In other words, we must aim at a situation where our imports and exports roughly balance. This cannot be achieved overtime because if we had done that drastically, we saw the consequences in 1991, but I agree that over a period of time, we cannot live beyond our means and I assure the House that we have today an exchange rate mechanism we have a tariff mechanism and with a compound impact of tariffs and of exchange rate system that we have, it will prevent the rise of a situation in which imports will grow at a rate which is simply not sustainable. I think it has not happened. I don't want to go into personalaties, but several people, when we launched this Market Determined Exchange Rate System in 1992, predicted that the rupee will go to 50 rupees. In fact, we have today one of the most successful exchange rate management systems. The rupee has remained roughly stable with minor aberrations

here and there and I think in a world where the exchange rate fluctuates daily and violently..

DR. MURLI MANOHAR JOSHI: There has been a loss of more than 10,000 crores because of these fluctuations in the last four months.

SHRI MANMOHAN SINGH: I am sorry, Dr. Joshi, if you look at what is happening with the currency market, no nation in the world today can ensure that to the last comma its exchange rate will remain what it is. But, I do claim in all sincerity that our exchange rate management has been a success story. We have proved those prophets of doom wrong who predicted that the rupee would depreciate to Rs. 50/- or there would be a flood of imports which our country would not be able to sustain. So, Madam, the strategy to avoid a debt trap is a strategy to improve the resource use of our economy, to increase our production, to increase our export and to make our economy more competitive. Dr. Mitra is not here. Now, this is not a new thing with Dr. Mitra. He is a very good friend of mine. He has been saying for the last fifty years that India's exports have no future. I respectfully submit that that is the view which is responsible for the state in which India today is. In the 1950's and 1960's when the world trade in textile was booming up, the people like Dr. Mitra, who were then associated with the planning process, were advising the Planning Commission that textile industry with labour-intensive technology had no future in the world trade. But, in the 1960's and also in the 1970's despite all the import restrictions, we saw the largest expansion in the world trade in textiles.

DR. BIPLAB DASGUPTA: He was referring to agriculture. (*Interjections*)....

SHRI MANMOHAN SINGH: Let me first finish... (*Interruptions*)... I will answer that also. I am coming to all those things. In 1948, India, this side of Suez, was the largest exporter of textile. Because we neglected the textile industry, because we did not tackle the problem of low American textile industry is today afraid of the GATT accord. I have seen myself on American Television, the American industry advertising that this GATT accord is going to destroy the American textile industry. I have seen myself campaigns in the United States that this GATT accord is going to destroy the US software industry and that the whole field will be covered by the Indian software engineers. So, I think one has to recognise that we live in an inter-dependent world. There are opportunities and there are risks also. The challenge before this country is not to say that we will not sign the GATT accord; the challenge is to recognise that there are opportunities, there are risks. It is possible for us, for this country, to minimise the risk and take full advantage of the opportunities. At the same time, Dr. Joshi was quoting what I said in 1989. I have not changed my view. I have always said on the floor of this House and on the floor of the other House also that international credit mechanism is in the final analysis of a political mechanism and that is why I have been saying. Let us get away from this dependence on aid. It is better to trade, it is better to invite foreign investment, but not to depend upon foreign governments. I have in the last four years not gone to the US Treasury and said, "Please give aid to India, "To the Chancellor of Exchequer who was here. I can faithfully say that I have not once said, "Please see that aid to India is increased." I did not talk about it. Productivity, because no attention was paid to modernisation of textile industry, because an alround view

prevailed that problems of India were going to be solved by having the capital goods industry and India did not have to export the Indian textile industry—we know there are 125 sick mills in the public sector — became a marginal producer and exporter. Therefore, what Dr. Mitra is saying today, I have heard him saying this 40 to 50 years back. And the growth of world trade in these very items which India had neglected, had been so phenomenal in the 1960s and 1970s that by taking that view, we have hurt our economy, we have destroyed employment opportunities that would have come in the way. If India's textile potential had been fully realised Shri Kotaiah would no, have been talking today about the sad plight of the handloom workers. Today all those handloom weavers would have owned — what I think, Shri Asok Mehta visualised in 1965 that each one of them should own a powerloom and that would have meant a big rise in their standard of living. We have done nothing of that sort. I, therefore, respectfully submit that this sort of thinking that the world trade has no future, has been proved wrong by history. The world trade has continued to grow even in the 1980s. It is still growing at a rate much faster than the world output. When we talk of the United States, despite the fact that the pressures exist in the United States, India has a trade surplus with the United States. Our largest trade surplus is with the United States. The I think we want to look to the world straight in the eye as equals. But so long as you are dependent on concessional aid I think you cannot look the other person straight in the eye. Hence this strategy of having business contact, commercial inflow of capital, direct investment, etc. Among equals mutuality of interest is there but not when we go to the American Government or to the U.K. Government asking for concessional aid. The era is in any case coming to an end

India has to prepare itself for an era in which concessional aid including assistance from soft windows like the IDA, will become less and less important. Therefore, it is all the more reason why India should strengthen its economy, all the more reason why India should strengthen its export efforts, all the more reason why we should welcome direct investments. It is because you cannot cut India from the worldwide trend for improving our management skill, our technology and the associated management skills that come with investment. Madam, Dr. Joshi brought up the question of the relations between external debt and internal debt. I do agree that these things are related. An economy is an inter-linked operation. As Dr. Biplab Dasgupta, who is a distinguished economist, knows that everything in economics depends upon everything else. That is why as a part of the whole management of our economy, I have been saying from day one that we have to reduce our fiscal deficit. If you are interested in reducing your internal debt and also improving your balance of payments situation in the long run, then you have to reduce your fiscal deficit. In the first year that our Government came into office, we reduced the fiscal deficit by full two percentage points of our GDP; We have been less successful, but I think the goal is there and I seek the cooperation of all sections of the House to ensure that this fiscal deficit is reduced and eliminated. If this fiscal deficit is eliminated, we will not be borrowing and if we don't borrow, interest rates will come down in our country. Our investors will get capital on cheaper terms. Therefore, the House as a whole should bless this strategy which tries to control the fiscal deficit. Now, what is the way to control fiscal deficit? The only way to control fiscal deficit is: we control all unnecessary,

unproductive, expenditure; and see that we improve the productivity of the public sector enterprises. If the public sector enterprises yield more internal resources, there will be less drain on the Budget and, at the same time, we must modernise our tax system so that without having confiscatory rates of taxation which cannot be made effective, but which also help in the generation of black money, without going through that route, if we can collect a lot more money by way of taxation, I think then we will be moving closer to a system by which fiscal deficit will go down. If we cut drastically the fiscal deficit of 5.5 percent overnight, it will lead to a lot of unemployment because if we reduce the fiscal deficit the demand for private sector goods and services will go down. There will be a lot more idle capacity, there will be a lot more increase in unemployment. So, as a Government, we have to balance all these things. We have deliberately adopted a gradualistic strategy. Fiscal deficit should have been reduced more. We have not succeeded there, but I think we have made progress. Even though I agree with Dr. Murli Manohar Joshi that this progress is not adequate, yet we as a nation have to worry about both the internal debt and the external debt. With these words, Madam, I once again repeat what I said, that India has a debt problem. We have an internal debt problem and an external debt problem, but the solutions to these can be found only in the medium-term options. I think we are on the right track. It will be our effort to ensure that India does not fall into a debt trap. Now, Dr. Murli Manohar Joshi mentioned that we have reserves, but we have in them volatile flows like non-resident deposits. To the extent possible, we are trying to reduce volatile flows. Similarly, the portfolio type of flows. The question as to whether these flows are volatile or not—I

would respectfully submit also depends on the type of economic policies that the country pursues. If this country pursues reckless economic policies, if our policies promote economic instability, if our political system is prone to instability, if this country gets divided once again on the basis of caste, creed and religion, nobody can say that capital would not flow out of India. It does not have to be the portfolio capital. It does not have to be the non-resident investments. The Indian people also would like to take their capital out. You may ask as to how this would happen. Today, our foreign trade—the total imports and exports—is nearly 60 billion dollars. If you create an environment of instability—political or economic—the sheer phenomenon of underinvoicing and underinvoicing of export and over invoicing of imports itself can become a powerful mechanism for illegal export of capital.

I was in Geneva for three-and-a-half years. I had a lot of friends in the banking community. Whenever I meet them, they would say: 'Excellency, your country does not need any foreign aid. If only you can bring back to your country the money that your residents have in the Swiss banks and elsewhere, outside, your country will not need any foreign aid'.

DR. MURLI MANOHAR JOSHI: What have you done in this regard after you took over?

SHRI MANMOHAN SINGH: Let me say what we have done. We have tried to create an environment where the people can grow, where they can remain honest. We have reduced the tax rates. We have reduced the scope for smuggling. For the last forty-five years, our Governments did not recognise that the desire for gold in the country was deeply rooted in the

psyche of the Indian people. Therefore, the smugglers of gold made a fortune. That is why people talk about the hold of the smugglers on the economic and political life. How did it come about? That is why our Government took the first step of liberalising the import of gold. We have not totally eliminated the phenomenon of smuggling of gold, but today, it is much less.

SHRI S. VIDUTHALAI VIRUMBI: Madam, may I make a point?

THE VICE-CHAIRMAN (MISS SAROJ KHAPARDE): Mr. Virumbi, please sit down. Let him complete.

SHRI MANMOHAN SINGH: In the same way, Madam, thousands of crores worth of textiles were being smuggled into India every year. I went to Osaka five years ago. There were factories which were exclusively earmarked for producing sarees. I asked the 'What are these Japanese factories doing? Nobody wears sarees in Japan'. They told me that the entire production from these factories was going to India. How did it come about? If you have a tariff rate of 300 per cent, if you do not allow the import of these goods, they would be smuggled into the country. It was not that the earlier system was more virtuous. Under the system which prevailed before 1991, the goods came, but they came via the courtesy of the smugglers. If you go to Calcutta or Madras or Bombay, you can get the most sophisticated catalogue of items. They would tell you. Within five-six weeks, you can get anything you want from anywhere in the world.

Therefore, what we are trying to do is to see that these things are normalised: that, to the extent possible, the smugglers have less hold on our economy. Liberalisation is not merely an economic necessity. I feel, it is also a moral necessity; to reduce the scope for corruption, to reduce the

scope for the smugglers and other anti-social elements from having a hold on the national economy.

Madam, this is all I wanted to say on this subject. I conclude by once again thanking all the hon. Members who have taken part in this debate.

Finally, Dr. Joshi's point. He mentioned several statistics. In the course of this reply, it is not possible to deal with all the statistics. But I would respectfully submit that, as far as I can see, we try to put out the statistics, as best as we can. Before I became the Finance Minister, nobody knew what India's foreign debt was. Our foreign creditors knew it all the time. The Russians were making available these figures to everybody in the world. But somehow, we kept it hidden from our public. I said: 'No, our people need to be told the truth, and the whole truth. To the extent possible, we are trying to update these statistics. There are still problems. In all countries, in the balance of payment statistics, there is a large item called—Dr. Biplab Dasgupta would tell you—'Errors and Omissions'. Errors and omissions cover a multitude of things. I think, we still do not know, for example, what is there whether it is unrecorded invisible or it is unrecorded capital inflow. Our efforts in the last four years have been to make our system more credible. Now, every year, we will bring out a White paper on foreign debt. We will update it. We will come back to the House with a White Paper on the state of our external debt. I think, this country is entitled to know the truth and the whole truth because I sincerely believe that it is only then that we will get a sound policy framework. People may differ on how to tackle this problem, but there is no scope for difference when it comes to facts.

With these words, I once again thank all the hon. Members who have taken part in this discussion.

DR. BIPLAB DASGUPTA: Just one minute.

THE VICE-CHAIRMAN (MISS SAROJ KHAPARDE): Dr. Biplab Dasgupta, I think, the Minister has replied to each and every point raised by hon. Members.

DR. BIPLAB DASGUPTA: No. Only if he agrees. I will mention this. (Interruptions)

THE VICE-CHAIRMAN: No.

MESSAGE FROM THE LOK SABHA

The National Highways (Amendment) Bill, 1995.

SECRETARY-GENERAL: Madam, I have to report to the House the following message received from the Lok Sabha, signed by the Secretary-General of the Lok Sabha:

"In accordance with the provisions of rule 96 of the Rules of procedure and Conduct of Business in Lok Sabha, I am directed to enclose the National Highways (Amendment) Bill, 1995, as passed by the Lok Sabha at its sitting held on the 31st May, 1995."

I lay the Bill on the Table.

THE VICE-CHAIRMAN (MISS SAROJ KHAPARDE): I adjourn the House till 11-00 a.m. tomorrow.

The House then adjourned at fifty-one minutes past seven of the clock till eleven of the clock on Thursday, the 1st June, 1995.